Volume 7, Issue2, (April-June, 2019)
Impact Factor: 5.659 [ISSN: 2348 - 2605]
अंतर्राष्ट्रीय हिंदी एवं सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका

गढ़वाल हिमालय के प्रमुख मेले एवं–सांस्कृतिक प्रादेशीकरण

पिंकी रानी
शोधार्थी
दर्शनशास्त्र विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। उसके समाज की पहचान उसकी संस्कृति से होती है किसी सामाजिक समूह के जीवनयापन की पद्धति को संस्कृति कहते हैं जिसमें उस समाज के मनुष्य का ज्ञान, कला, नीति, कानून, परम्परा, विश्वास, धर्म, दर्शन जैसी सभी तत्त्व शामिल होते हैं।

गढ़वाल हिमालय की उसके भौगोलिक वातावरण के अनुसार एक संस्कृति है जो उसे एक अलग ही विशिष्टता प्रदान करती है यह क्षेत्र हिमालय के उत्तरी भाग में स्थित है जो भारत के अन्य क्षेत्रों में एकदम अलग है। गढ़वाल के रीति–रिवाज और परम्पराएँ भी प्रकृति से अधिक प्रभावित मिलते हैं।

गढ़वाल की जीवन पद्धति, सामाजिक, आर्थिक, इतिहास, लोक परम्पराएँ एवं धार्मिकता यहां के मेलों में झलकती है। गढ़वाल हिमालय की गोद में बसा हुआ है। इसकी एकान्त स्थिति के कारण देवताओं और ऋषि मुनियों ने यहाँ निवास किया एवं तपस्या की। अतः इसे 'देवभूमि' भी कहा जता है इसलिए यहां के मेले, त्यौहार एवं परम्पराएँ प्रकृति से अधिक प्रभावित है। गढ़वाल हिमालय का अधिकांश भाग पर्वतीय है।

प्राचीनकाल में गढ़वाल के मेलों का उद्देश्य आर्थिक अधिक था। मण्डी दूर होने के कारण लोग वर्ष में एक बार आवश्यक वस्तुओं का संग्रहण कर लेते थे। अधिकांश वस्तुओं के लिए यह क्षेत्र आत्मनिर्भर था किन्तु नमक, चाय तेल और कुछ अन्य सामानों का प्रबन्ध लोग मेलों से ही करते थे।

गढ़वाल हिमालयमें मेलों का उपयोग देवी–देवताओं के सार्वजनिक दर्शन कराने के लिए भी किया जाता था। गढ़वाल हिमालय के पहाड़ियों वाले स्थानों में जब बाजार नहीं होते थे तो मेले व केन्द्र हुआ करते थे। जहाँ लोगों की आवश्यकताओं का सामान मिल जाता था। यहाँ समय के साथ मेलों का स्वरूप बदला है। गढ़वाल हिमालय में वैशाखी से एक सप्ताह तक मेले चलते रहे हैं। गढ़वाल में पहले यातायात के साधन नहीं थे। वैशाली के प्रधान पखवाडे के बाद खेती–बाड़ी में तेजी आ जाती थी। इससे बहू–बेटियाँ मायके वालो से मिलने के लिए समय निकाल पाती थी।

गढ़वाल हिमालय में मेलों और त्यौहारों की स्वस्थ परम्परा है। गढ़वाल के मेलों के आयोजन के पीछे अधिकांश धार्मिक कारण है। ये गढ़वाल हिमालय के मेलों का आसपास के प्रदेश की संस्कृति एवं आर्थिकी पर गहरा प्रभाव पड़ता है। मेलों से सम्बन्धित क्षेत्रों को' "मेले का प्रभाव क्षेत्र" कहा जाता है। प्रभाव क्षेत्र के लोगों की संस्कृति इन मेलों में स्पष्ट झलकती है। मेलों में लोग अपने रिश्तेदारों से मिलने अपनी आवश्यकता का सामान की खरीदारी, व्यापार आदि करने के लिए आते हैं।

गढ़वाल हिमालय के प्रमुख मेले और उनके प्रभाव क्षेत्र

नन्दासैंण का पर्यावरण संवर्द्धन और विकास मेला– पर्यावरण संरक्षण के विचार से यह मेला चमोली जिले में नन्दासैंण नामक बुग्यालमय स्थान में नवम्बर माह में आयोजित किया जाता है। इस मेले का मुख्य विषय स्थानीय पर्यावरण के संरक्षण के लिए जनचेतना फैलाना और स्थानीय अर्थव्यवस्था के विकास में स्थानीय हस्तशिल्प को बढ़ावा देना है। इस मेले में खेल, सांस्कृतिक कार्यक्रम प्रदर्शनियाँ और पर्यावरणीय जागरूकता बढ़ाये जाने के लिए नवीन कार्यक्रमों का आयोजन किया जाता है। इस मेले में प्रशासन की आरे से धन की व्यवस्था की जाती है साथ ही स्थानीय समुदाय भी मेला समिति को आर्थिक सहयोग प्रदान करती है। स्थानीय समुदाय के लोग मेले में बढ़–चढ़ कर भाग लेते है। इस मेले में मुख्य केन्द्र नन्दासैंण का मैदान होता है। इस मेले में स्थानीय संस्कृति स्पष्ट झलकती है। यह मेला जिला स्तरीय है। इस मेले में सफल संचालन के लिए निम्न समितियाँ बनायी गई हैं– स्वागत समिति, सुरक्षा समिति, वित्त समिति, प्रसार समिति, सांस्कृतिक समिति, क्रीड़ा समिति।

यह मेला उत्तरांचल के बिगड़ते और असमान पर्यावरण के संरक्षण में अहम् भूमिका निभा सकता है। इस मेले के संचालन में पर्यटन विभाग की महत्त्वपूर्ण भूमिका है जिसके सहयोग से मेले में अनेक विदेशी पर्यटक भी आते हैं इस मेले का प्रारम्भ लाटू एवं नन्दादेवी की पूजा से होती है। स्थानीय विद्यालयों के इको क्लबों द्वारा पर्यावरण रैली भी निकाली जाती है। मेले में विभिन्न विभागों के स्टॉल पर्यावरण प्रदूषण पर भाषण प्रतियोगिता, लोकगीत व लोक नृत्य ग्रामीण दौड़ आदि आयोजित किये जाते है।

ग्वालदम का काश्तकार मेला– यह मेला चमोली जिले के गढ़वाल और कुमांऊ के संगम स्थल ग्वालदम में अक्टुबर माह में लगता है कुटीर उद्योगों और सांस्कृतिक विरासत को बढ़ावा देने के उद्देश्य से यह मेला लगता है। मेले में स्थानीय कुटीर उद्योगों में निर्मित वस्तुएं एवं वाद्य यंत्रों की प्रदर्शनी लगाई जाती है तथा ग्रामीणों विभिन्न सरकारी योजनाओं की जानकारी दी जाती है। मेले में स्वास्थ्य शिविर भी लगाया जाता है। इसमें स्थानीय शिक्षण संस्थाओं द्वारा रंगारंग कार्यक्रम आयोजित किये जाते है। मेले में सभी जन प्रतिनिधि भाग लेते हैं।

कोटकण्डारा का दशमद्वार मेला– यह मेला चमोली जिले के कोटकण्डारा मे प्रतिवर्ष नन्दाष्टमी के दिन आयोजित होता है। दशमद्वार शब्द दशमोली से बना है जिसका अर्थ 'दस सिर' है माना जाता है कि कण्डारा में रावण ने शक्ति साधना की थी। यह मेला नन्दाजजात से सम्बन्धित है। कण्डारा को नन्दा का दशमद्वारा माना जाता है। प्रतिवर्ष आयोजित होने वाली लोकजात में यहां नन्दादेवी की आराधना तथा पूजा अर्चना की जाती है कोटकण्डारा का दशमद्वार मेला पूर्णतया धार्मिक मेला है।

कोटेश्वर मेला– कोटेश्वर मेला रूद्रप्रयोग जिला से 3 कि.मी. की दूरी पर अलकनंदा नदी के दक्षिण पूर्व में स्थित कोटिलिंगों में से एक कोटेश्वर महादेव के पार्श्व मान्दिर में श्रावण महिने की संक्रांति पर लगता है। यह रुद्रतीर्थ के नाम से प्रसिद्ध है। यह मेला सुख–समृद्धि की कामना के लिए लगता है जो भी व्यक्ति यहां कोई कामना लेकर आता है उसकी मनोकामना पूरी होती है। कोटेश्वर महादेव भगवान का मंदिर एक गुफा में स्थित है यहां गुफा के अन्दर पानी हर समय टपकता रहता है। कहावत है कि पांडव गौहत्या ओर ब्रह्महत्या के पाप से बचने के लिए भगवान शिव की खोज में कोटेश्वर पहुंचे। मंहत स्वामी शिवानन्द गिरि महाराज के अनुसार हर श्रावण मास में किसी न किसी सोमवार को गुफा तक माँ अलकनंदा भगवान शिव के चरण छूने पहुंच जाती है।

केदारघाटी का जाखराजा मेला–यह मेला केदारघाटी में गुप्तकाशी के पास जाखधार में प्रति वर्ष वैशाली के एक दिन बाद लगता है। इस मेले में पारंपरिक वाद्यों के साथ जाख देवता की पूजा अर्चना भी की जाती है। एक व्यक्ति पर जाख देवता अवतरित होते हैं और पांच फुट ऊंचे अग्नि कुण्ड में नंगे पांव कूद कर नृत्य करते है जाख देवता को समृद्धि सूचक माना जाता है जो अकाल से बचाते है। यह मेला गांवों का धार्मिक मेला अटूट श्रद्धा और विश्वास का प्रतीक है। जाख देवता के लिए एक दिन से पहले से ही पाँच फुट ऊँची आग्निकुंड में दहकती आग तैयार रखी जाती है। सुबह पूजा अर्चना के बाद जाख देवता अवतरित होकर इसमें कूद कर नृत्य करने लगते हैं।

भतियाणा का कुंवारी मेला–यह मेला वैशाखी पर्व पर थराली के ग्राम पंचायत भतियाणा में प्रतिवर्ष आयोजित होता है। इस मेले में महाकाली व मृत्युंजय महादेव की विशेष पूजा अर्चना की जाती है। इस मेले में कुंवारी कन्याएँ खास आकर्षण का केन्द्र होती है। ससुराल से मायके आकर माँ बहिनों से मिलने का भी यह मेला एक सशक्त माध्यम है। वैशाखी वर्ष पर शुरू यह मेला लगातार 12 दिनों तक चलता है। इस मेले के समापन पर गेंहू, जौ, सरसों आदि की फसले कटनी शुरू हो जाती है तथा ससुराल से मायके आई लड़कियां भी वापस अपने ससुराल जाने लगती है। यह मेला क्षेत्र में फसल पकने का संकेत है।

बैरासकुण्ड का शिवरात्रि मेला–यह मेला चमोली जिले बैरासकुण्ड में शिवरात्रि के दिन लगता है। वैरासकुण्ड बद्रीनाथ मार्ग पर नन्दा प्रयाग से 10 कि.मी. दूरी पर है। वैरासगुण्ड को सिद्धपीठ माना

जाता है। यहां रावण ने शिव की आराधना की थी। इस आराधना में रावण ने अपने नौ शीरों कों तप के बाद भगवान शिव के चरणों में अर्पित कर दिया था। आज भी यह कुण्ड यहां मौजूद है जिसमें रावण ने तपस्या के बाद शिव चरणों में अपनी शीशों को अर्पित किया था। बाद में शिव ने प्रसन्न होकर उसे उसके दसों सिर वापस दिए और शक्तिशाली होने का वरदान दिया। घोर तपस्या के बाद शिव की आज्ञा से रावण इस लिंग को बिहार के बैजनाथ ले जा रहा था। शिव की शर्त के मुताबिक उसे मार्ग में जमीन पर कहीं भी नहीं रखना था अन्यथा यह वहीं स्थापित हो जाता। मार्ग में किसी कारणवश रावण को वैद्यनाथ में रूकना पड़ा इस लिंग को वहां उपस्थित एक ग्वाले के पास दिया। भारी होने के कारण ग्वाले ने इसे जमीन पर रखा और यह लिंग वहीं वैद्यनाथ में स्थापित हो गया। यह एक पूर्णतः धार्मिक मेला है।

अनुसूया मेला– यह मेला चमोली जिले के गोपश्वर मंडप से लगभग 5 कि.मी. की पैदल चढाई पर स्थित अनुसूया के मन्दिर में लगता है। इस मेले में बड़ी संख्या में सन्तान प्राप्ति के वरदान के लिए दूर–दूर से निसन्तान दम्पत्ति आते हैं यह मेला चतुर्दशी व पंचमी को दो दिन तक लगता है। दिसम्बर महीने की कंपकपाती ठंड के बावजूद यह मेला रात दिन चलता है। यह मंदिर बर्फीली चोटियों ओर घने जंगलों के मध्य स्थित है। अनुसूया मेला यहाँ फैले जंगल व बुग्यालों में लगता है।

कोटेश्वर चम्बा का मकर संक्रांति का मेला–यह मेला टिहरी जिले के विकासखण्ड नरेन्द्र नगर में क्वीली पट्टी में स्थित कोटेश्वर के शिव मन्दिर में प्रतिवर्ष मकर संक्रान्ति पर लगता है। यह एक धार्मिक मेला है जिसमें हजारों शिव भक्त यहां के शिवकुण्ड में स्नान कर भगवान कोटेश्वर शिव के दर्शन करते है। इस एक दिवसीय मेले में इससे पूर्व खड रात्रि में सैंकड़ों दम्पत्ति पुत्र प्राप्ति हेतु भगवान शिव की आराधना करते है। सन्तान प्राप्ति के लिए सैकड़ों महिलाएँ यहाँ मंदिर परिसर में रातभर हाथ में दिए जलाकर खड़ी रहकर प्रार्थना करती है। ऐसा माना जाता है कि इस प्रक्रिया में उन्हें पुत्र रत्न की प्राप्ति अवश्य होती है।

रानीगढ आदेश्वर महादेव कोथिग मेला–यह मेला पौडी जिले में पौडी से 17 कि.मी. दूर सघन वनाच्छादित अदवानी रेंज के अदवानी बाजार से डेढ़ कि.मी. की ऊँचाई पर स्थित पर्यटनस्थल रानीगढ के आदेश्वर महादेव में आयोजित किया जाता है। यह मेला प्रतिवर्ष लगता है इसमें भव्य भण्डारे का भी आयोजन होता है। मेले का प्रारम्भ भण्डारे व पूजन के साथ होता है। मंदिर में भण्डारा व पांडव नृत्य के आयोजन भी होता है। भण्डारे के पहले रात्रि में जागरण किया जाता है। इस मेले में लोक संस्कृति के मंडाण नृत्य प्रमुख आकर्षण होते हैं।

नन्दा देवी पातबीडा उत्सव मेला– नंदा देवी पातबीडा उत्सव मेले का आयोजन चमोली ओर रुद्रप्रयाग जिलों के तल्ला नागपुर क्षेत्र में प्रति 12 वर्ष बाद किया जाता है। यह आयोजन मुख्य रूप से आगत्स्यमुनि प्रखंड की ग्राम पंचायत क्वीली में दस दिन तक चलता है।

बौल्याधार ठांडी गाँव का भेड़ मेला–यह मेला उत्तरकाशी के बौल्याधार ठाण्डी गांव में प्रति तीन वर्ष में पांच दिन तक आयोजित होता है। इस मेले में गजणा पट्टी के सभी गांव भाग लेते है। भेड मेला का अर्थ स्थानीय भाषा में 'भेरुकू तमाशू' है। इस मेले में आस्था व कौतुहल के साथ श्रद्धालु जलकूर घाटी में स्थित बौल्याधार ठाण्डी गांव में एकत्रित होते हैं। भादों के महीने में यह मेला इस गांव के हरे भरे जंगल लहलहाते खेत और बरसात की उफनती नदियों के मध्य आयोजित होता है। इस मेले में भेडों का प्रमुख स्थान होता है। इसका प्रारम्भ क्षेत्र के प्रसिद्ध देवता बौल्या महाराज के वैदिक पूजन के साथ होता है। इस क्षेत्र के सभी काश्तकारों का मुख्य व्यवसाय भेड पाल होने के कारण इसमें भेडों का प्रमुख स्थान है। इस क्षेत्र के भेडपालन व्यवसाय में भेडों को चुगाने के लिए पशुचारक 6 माह तक बुग्यालों में चले जाते हैं तथा इस मेले के दिन भेडों को नमक खिलाकर घरों को वापस लाते हैं। जंगल में गडरिये द्वारा एकत्रित भेड़ों का झुण्ड मेले के संपन्नार्थ मण्डाण के चारों और एक साथ घूमकर वापस लौट जाती है। डांडा सौड नामक स्थान पर पुनः भेडों को एकत्रित कर उनमें ऊन निकालते हैं मेले में भेड़ों के घूमने का यह दृश्य कुतूहल भरा होता है। इसके बाद देवी देवताओं का नृत्य शुरू होता है तथा मेले का समापन हो जाता है। इस मेले में अनेक लोक संस्कृति पर आधारित कार्यक्रम आयोजित किये जाते हैं।

ऊपरीकोट गांव का समेश्वर मेला– यह मेला उत्तरकाशी जिले के भटवाडी क्षेत्र में वरुणा नदी के उद्‌गम स्थल वातुलिया डांडा के उत्तर में स्थित ऊपरीकोट गांव में समेश्वर महाराज की पूजा अर्चना में आयोजित होता है। इस मेले में समेश्वर देवता की पूजा प्राचीन परम्परानुसार सम्पन्न होती है। यह मेला बैशाख प्रति तीन वर्ष एवं भादो महीने में दो दिवसीय होता है। इस मेले में ऊपरीकोट गांव में समीपवर्ती अनेक गांवों के लोग ग्रामीण संस्कृति के अंदाज में लोकगीत, लोकनृत्य 'रांसू' (कमर में हाथ कसे दर्जजनों महिलाएं) में हुए पहुंचते है। जिनका ऊपरीकोटवासियों द्वारा स्वागत किया जाता है।

इस मेले में देर रात तक लोकगीतों और लोग नृत्य रांसू का आयोजन परम्परागत लोक वाद्य यन्त्रों ढोल–दमाऊ रणसिंगा आदि के साथ किया जाता है। रांसू लोकनृत्य प्रमुख है जिसमें महिलाएं एक दूसरे के कन्धे पर हाथ डालकर नृत्य करती है। मेले के दूसरे दिन दोपहर बाद समेश्वर देवता की पूजा होती है। जागर के माध्यम से जागरी देवता का पूरा इतिहास कंठस्थ लयबद्ध दोहराया जाता है। इन जागरों को सुनकर सामने चौकी पर बैठा व्यक्ति थिरकने लगता है तथा आवेशित और देववेव अवतरित होकर धनुल, तुंडीर, डांगडी, कुल्हाड़ीनुमा हथियार हाथों में लेकर नाचने लगता है। देवता के साथ ही उसकी डोली भी धिरकती है तथा लोग इसी समय देवता से प्रश्न करते हैं और श्रुद्धालु हाथ जोड़कर देवता से मनोकामनाएँ मांगते है। यह धार्मिक मेला है।

धारी देवी का नवरात्र उत्सव मेला– यह उत्सव प्रतिवर्ष रुद्रप्रयाग जिले के बावन शक्तिपीठों में से एक धारी देवी के मंदिर में आयोजित होता है। धारी देवी का मंदिर कलियासौड़ के समीप अलकनन्दा नदी के अनुसार काली के रूप में देवी ने भादो मास की कृष्ण पक्ष की एक रात को समीप के एक गांव में कुंजू केवट को स्वप्न में दर्शन दिये। उसने कहा कि अलकनन्दा में मेरी मूर्ति बह रही है। उसे निकालकर किनारे स्थित सूरजकुण्ड के पास स्थापित किया जाए। माना जता है कि धारी देवी सुबह बालिका, दोपहर में युवती और शाम को वृद्धा के रूप में दर्शन देती है। पौराणिक कथाओं के अनुसार देवों ने दैत्यों के संहार के बाद विकराल रूप धारण कर काली ने देवों से अपनी शक्तियों को अलग करने की प्रार्थना की। इस मन्दिर में चैत्र और आश्विन मास में उत्सव रहता है।

पांडव नृत्य उत्सव मेला– यह उत्सव गढ़वाल हिमालय के अनेक गांवों में आयोजित होता है। यह क्षेत्र महाभारतकालीन संस्कृति से प्रभावित है प्रत्येक गांव में एक पांडव चौक होता है जिसमें पांच पाण्डवों के प्रतीक गढ़े जाते है इस उत्सव में पात्र पौराणिक शैली में नृत्य करते है। पाण्डवनृत्य के कार्यक्रम में विधि विधान से पाण्डव शास्त्रों की पूजा की जाता है। इसके बाद पांचों पाण्डव शस्त्रों के साथ नृत्य करते हैं।

चक्रव्यूह मंचन में अभिमन्यु तथा कौरवों के बीच युद्ध दिखाया जाता है। इस युद्ध में प्रथम द्वार में सिन्धुराज, जयद्रथ, द्वितीय में द्रौण, तीसरे में कर्ण, चौथे में कृपाचार्य, पांचवे में अश्वात्थामा, छठे में कृतवर्मा तथा सातवें में दुर्योधन रहते है। इस चक्रव्यूह में बालक अभिमन्यु छह को परास्त कर कौरवों में खलबली मचा देता है। अभिमन्यु के सातवें द्वार पर पहुंचने पर दुर्योधन को अपने दोनों पुत्रों के वध का पता चलता है। हताश दुर्योधन कौरव सेना को एकत्रित कर अभिमन्यु को मारने की रणनीति बनाता है और सफल होता है।

रुद्रप्रयाग जिले के ग्राम पंचायत दरमोला में प्रतिवर्ष आयोजित होने वाले पाण्डव नृत्य उत्सव मेले में एकादशी के दिन अलकनन्दा–मन्दाकिनी के संगम पर स्नान करते हैं रात में जागरण किया जाता है। यहाँ पन्द्रह दिनों तक रात को पाण्डव नृत्य का आयोजन किया जाता है। कर्ण वध चक्रव्यूह भेदन लीला तथा दुर्योधन वध के साथ पाण्डव लीला का समापन किया जाता है।

कुंभ मेला– यह धार्मिक मेला गढवाल के प्रवेशद्वार में सूर्य के मेष राशि में तथा बृहस्पति के कुम्भ राशि में प्रवेश करने पर प्रति 12 वर्ष में आयोजित होता है। यहां प्रति 6 वर्ष में अर्द्धकुम्भ मेला लगता है। भारत में कुभ मेला (हरिद्वार गंगा नदी के किनारे पर), प्रयाग (गंगा, यमुना, सरस्वती नदियों के संगम पर), उज्जैन (क्षिप्रा नदी के तट पर) एवं नासिक (गोदावरी नदी के तट पर) लगता है। इस मेले में हिन्दू धर्म के लोग देशभर से गंगा नदी में स्नान करने के लिए हरिद्वार आते है। यह गढ़वाल का सबसे बड़ा स्तर का राष्ट्र मेला है। हरिद्वार में अर्द्धकुंभ का आयोजन बृहस्पति का पांचवी राशि सिंह में तथा

सूर्य के मेषस्थ होने पर किया जाता है। इस क्षेत्र से गंगा मैदानी भाग में प्रवेश करती है। कुम्भ पर मुख्य स्नान 'हर की पौड़ी' पर किया जाता है।

देहरादून का लक्ष्मणसिंह मेला–यह मेला प्रतिवर्ष अप्रैल के अन्तिम रविवार को देहरादून में स्थित सिद्धपीठ लक्ष्मण सिंह में लगता है। यह एक धार्मिक मेला है। लक्ष्मणसिंह में प्रत्येक रविवार को एक स्थानीय धार्मिक मेला भी लगता है। लक्ष्मणसिंह का मन्दिर ऋषिकेश–देहरादून मार्ग पर मुख्य मार्ग से एक किमी. अन्दर जंगल की और स्थित है। इस मेले में श्रद्धालु मुख्य रूप से गुड की भेली का चढ़ावा चढ़ाते हैं।

केदारनाथ का अन्नकूट मेला–यह मेला प्रतिवर्ष अन्नकूट त्यौहार के अवसर पर रुद्र प्रयाग जिले के श्री केदारनाथ धाम में आयोजित होता है। इस मेले में भगवान शिव को चावलों का भात बनाकर उसे भोग के रूप में अर्पित किया जाता है। भतूज के दिन पूरे शिवलिंग को ढक दिया जाता है। इसके बाद भगवान शिव की पूजा अर्चना होती है। यह एक धार्मिक मेला है। इस मेले में केदारनाथ के प्रधान पुजारी द्वारा भगवान श्री केदारनाथ को भोग अर्पित किया जाता है। अन्नकूट मेले में केदारनाथ क्षेत्र के दूर–दराज के लोग भाग लेते है। माना जाता है कि यह मेला सृष्टि की उत्पत्ति से ही केदारनाथ में लगता आ रहा है।

निष्कर्ष– के तौर पर कहा जा सकता है कि मेलों के आयोजन में परिवर्तन कुछ दशक पूर्व गढ़वाल के मेले सहयोग एवं सौहार्द्रता के साथ आयोजित किये जाते थे किन्तु वर्तमान में सांस्कृतिक रूपान्तरण के कारण इन मेलों में निहित इन भावनाओं का ह्रांस हो रहा है। अब ये मेले एक रस्म के रूप में प्रशासनिक आधार पर आयोजित किये जा रहे है जिनसे जनसहभागिता बहुत कम होती है। मेलों में लोक संस्कृति मात्र स्टेज शो के कार्यक्रमों में ही दिखाई देती है। प्राचीनकाल में मेले में क्षेत्र के लोगों के लिए खरीददारी ओर स्वस्थ मनोरंजन के साधन होते थे। वर्तमान में यह उद्देश्य हाशिये पर आ गया है। मेले सांस्कृतिक प्रदूषण के माध्यम बनने लगे हैं। अतः मेलों में आयोजन के तरीकों में बहुत बड़ा अन्तर आया है। जिनमें लोगों का भावनात्मक लगाव कम होने लगा है।

त्यौहारों के स्वरूप में परिवर्तन–कुछ दशक पूर्व गढ़वाल के त्यौहार हर्ष, उल्लास, सहयोग एवं सौहार्द्रता के माध्यम होते थे। त्यौहारों एवं पर्वों पर परिवार, कुटुम्ब और गांव के सभी लोग मिलजुल कर सहयोग और सौहार्द की भावना से खुशियाँ मनाते थे।

रहन–सहन के तरीकों में परिवर्तन–सांस्कृतिक रूपान्तरण के कारण गढ़वाल के निवासियों के परम्परागत रहन–सहन के तौर–तरीकों में अत्यधिक परिवर्तन आया है। भोज्य पदार्थों में 'फास्ट फूड' का प्रसार हुआ है। मदिरा का प्रचलन बढ़ने के कारण यहाँ के सम्बन्ध में एक कहावत अधिक प्रचलित हो गई है कि 'सूर्य अस्त, गढ़वाल मस्त'। जिसका सर्वाधिक प्रभाव यहां की महिलाओं पर पड़ा है पहले

गढ़वाल के घर मिट्टी, पत्थर और लकड़ी के बनाये जाते थे। ये आवास यहां की जलवायु के अनुकूल होते थे जो गर्मियों में शीतल और शीत में गर्म होते थे। ये आवास यहां के पर्यावरण के अनुकूल होते थे वर्तमान को इनका स्थान सीमेन्ट कंक्रीट और लोहे से बने मकानों ने ले लिया। अतः यहां के परम्परागत आवासों के निर्माण की कला लुप्त होती जा रही है।